युगीन परिवेश में महावीर स्वामी के सिद्धान्त

डॉ. सागरमल जैन

आज सम्पूर्ण विश्व अशान्त एवं तनावपूर्ण स्थिति में है। बौद्धिक विकास से प्राप्त विशाल ज्ञान-राशि और वैज्ञानिक तकनीक से प्राप्त भौतिक सुख-सुविधा एवं आर्थिक समृद्धि मनुष्य की आध्यात्मिक, मानसिक एवं सामाजिक विपन्नता को दूर नहीं कर पायी है। ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा देने वाले सहस्राधिक महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों के होते हुए भी आज का शिक्षित मानव अपनी स्वार्थपरता और भोग-लोलुपता पर विवेक एवं संयम का अंकुश नहीं लगा पाया है। भौतिक सुख-सुविधाओं का यह अम्बार भी उसके मानस को सन्तुष्ट नहीं कर सका है। आवागमन के सुलभ साधनों ने विश्व की दूरी को कम कर दिया है, किन्तु मनुष्य-मनुष्य के बीच हृदय की दूरी आज ज्यादा हो गई है। सुरक्षा के साधनों की यह बहुलता आज भी उसके मन में अभय का विकास नहीं कर पायी है। आज भी मनुष्य उतना ही आशंकित, आतंकित और आक्रामक है, जितना आदिम युग में रहा होगा। मात्र इतना ही नहीं, आज विध्वंसकारी शस्त्रों के निर्माण के साथ उसकी यह आक्रामक वृत्ति अधिक विनाशकारी बन गयी है और आज शस्त्र-निर्माण की इस अन्धी दौड़ में सम्पूर्ण मानव जाति की अन्त्येष्टि की सामग्री तैयार की जा रही है। आर्थिक सम्पन्नता की इस अवस्था में भी मनुष्य उतना ही अर्थलोलुप है जितना कि वह आदिम युग में कभी रहा होगा। आज मनुष्य की इस अर्थलोलुपता ने मानव जाति को शोषक और शोषित के दो ऐसे वर्गों में बाँट दिया है जो एक-दूसरे को पूरी तरह निगल जाने की तैयारी कर रहे हैं। एक भोगाकांक्षा और तृष्णा की दौड़ में पागल है, तो दूसरा पेट की ज्वाला को शान्त करने के लिए व्यग्र और विक्षुब्ध। आज विश्व में वैज्ञानिक तकनीक और आर्थिक समृद्धि की दृष्टि से सबसे अधिक विकसित राष्ट्र यू. एस. ए. मानसिक तनावों एवं आपराधिक प्रवृत्तियों के कारण सबसे अधिक परेशान है। इस सम्बन्धी उसके आँकड़े चौकाने वाले हैं। आज मनुष्य का सबसे बड़ा दुर्भाग्य तो यह है कि इस तथाकथित सभ्यता के विकास के साथ उसकी आदिम युग की एक सहज, सरल एवं स्वाभाविक जीवन-शैली भी उससे छिन गयी है। आज जीवन के हर क्षेत्र में

आकाशवाणी वाराणसी से २४-४-९४ को प्रसारित वार्ता।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृत्रिमता और छद्मों का बाहुल्य है। उसके भीतर उसका 'पशुत्व' कुलांचे भर रहा है, किन्तु बाहर वह अपने को 'सभ्य' दिखाना चाहता है। अन्दर वासना की उद्दाम ज्वालायें और बाहर सच्चरित्रता और सदाशयता का छद्म जीवन, यही आज के मानव-जीवन की त्रासदी है, पीड़ा है। आसक्ति, भोगलिप्सा, भय, क्रोध, स्वार्थ और कपट की दमित मूल प्रवृत्तियाँ और उनसे जनित दोषों के कारण मानवता आज भी अभिशप्त है, आज वह दोहरे संघर्षों से गुजर रही है – एक आन्तरिक और दूसरे बाह्य। आन्तरिक संघर्षों के कारण आज उसका मानस तनावयुक्त है – विक्षुब्ध है, तो बाह्य संघर्षों के कारण सामाजिक जीवन अशान्त और अस्त-व्यस्त। आज का मनुष्य परमाणु तकनीक की बारीकियों को अधिक जानता है किन्तु एक सार्थक सामंजस्यपूर्ण जीवन के आवश्यक मूल्यों के प्रति उसका उपेक्षा भाव है। वैज्ञानिक प्रगति से समाज के पुराने मूल्य ढह चुके हैं और नये मूल्यों का सृजन अभी हो नहीं पाया है। आज हम मूल्य-रिक्तता की स्थिति में जी रहे हैं और मानवता नये मूल्यों की प्रसव-पीड़ा से गुजर रही है। आज हम उस कगार पर खड़े हैं जहाँ मानव-जाति का सर्वनाश हमें पुकार रहा है। देखें, इस दुःखद स्थिति में भगवान् महावीर के सिद्धान्त हमारा क्या मार्गदर्शन कर सकते हैं ?

वर्तमान मानव जीवन की समस्यायें निम्न हैं –

१. मानसिक अन्तर्द्वन्द, २. सामाजिक एवं जातीय संघर्ष, ३. वैचारिक संघर्ष एवं ४. आर्थिक संघर्ष।

अब हम इन चारों समस्याओं पर भगवान महावीर की शिक्षाओं की दृष्टि से विचार कर यह देखेंगे कि वे इन समस्याओं के समाधान के क्या उपाय प्रस्तुत करते हैं ?

१. मानसिक अन्तर्द्वन्द

मनुष्य में उपस्थित रागद्वेष की वृत्तियाँ और उनसे उत्पन्न क्रोध, मान, माया और लोभ के आवेग हमारी मानसिक समता को भंग करते हैं। विशेष रूप से राग और द्वेष की वृत्ति के कारण हमारे चित्त में तनाव उत्पन्न होते हैं और इसी मानसिक तनाव के कारण हमारा बाह्य व्यवहार भी असन्तुलित हो जाता है। इसलिए भगवान महावीर ने राग-द्वेष और कषायों अर्थात् अहंकार, लोभ आदि की वृत्तियों के विजय को आवश्यक माना था। वे कहते थे कि जब तक व्यक्ति राग-द्वेष से ऊपर नहीं उठ जाता है, तब तक वह मुक्ति को प्राप्त नहीं कर सकता। वीतरागता ही महावीर की दृष्टि में जीवन का सबसे बड़ा आदर्श है। इसी की उपलब्धि के लिए उन्होंने 'समभाव' की 'साधना' पर बल दिया। यदि महावीर की साधना-पद्धति को एक वाक्य में कहना हो तो हम कहेंगे कि वह समभाव की साधना है। उनके विचारों में धर्म का एकमात्र लक्षण है – समता।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वे कहते हैं कि समता ही धर्म है। जहाँ समता है, वहाँ धर्म है और जहाँ विषमतायें हैं वहीं अधर्म है। आचारांग में उन्होंने कहा था कि आर्यजनों ने समत्व की साधना को ही धर्म बताया है। समत्व की यह साधना तभी पूर्ण होती है जबकि व्यक्ति क्रोध, मान, माया और लोभ जैसे आवेगों पर विजय पाकर राग-द्वेष की वृत्ति से ऊपर उठ जाता है। वर्तमान युग में मानव-जाति में जो मानसिक तनाव दिन- प्रतिदिन बढ़ रहे हैं उनका कारण यह है कि राग-द्वेष की वृत्तियाँ मनुष्य पर अधिक हावी हो रही हैं। वस्तुतः व्यक्ति की ममता, आसक्ति और तृष्णा ही इन तनावों की मूल जड़ है और महावीर इनसे ऊपर उठने की बात कह कर मनुष्य को तनावों से मुक्त करने का उपाय सुझाते हैं। आचारांग में वे कहते हैं कि जितना-जितना ममत्व है उतना-उतना दुःख और जितना-जितना निर्ममत्व है उतना ही सुख है। उनके अनुसार सुख और दुःख वस्तुगत नहीं है, आत्मगत है। वे हमारी मानसिकता पर निर्भर करते हैं। यदि हमारा मन अशान्त है तो फिर बाहर से सुख-सुविधा का अम्बार भी हमें सुखी नहीं कर सकता है।

२. सामाजिक एवं जातीय संघर्ष

सामाजिक और जातीय संघर्षों के मूल में जो प्रमुख कारण रहा है – वह यह है कि व्यक्ति अपने अन्तस् में निहित ममत्व व राग-भाव के कारण मेरे परिजन, मेरी जाति, मेरा धर्म, मेरा राष्ट्र ऐसे संकुचित विचार विकसित कर अपने 'स्व' को संकुचित कर लेता है। परिणामस्वरूप अपने और पराये का भाव उत्पन्न होता है फलतः भाई-भतीजावाद, जातिवाद, साम्प्रदायिकता आदि का जन्म होता है। आज मनुष्य-मनुष्य के बीच सुमधुर सम्बन्धों के स्थापित होने में यही विचार सबसे अधिक बाधक है। हम अपनी रागात्मकता के कारण अपने 'स्व' की संकुचित सीमा बनाकर मानव समाज को छोटे-छोटे घेरों में विभाजित कर देते हैं फलतः मेरे और पराये का भाव उत्पन्न होता है और यही आगे चलकर सामाजिक संघर्षों का कारण बनता है। भगवान महावीर का सन्देश था कि 'सम्पूर्ण मानव जाति एक है (एगा मणुस्सजाई); उसे जाति, वर्ण अथवा राष्ट्र के नाम पर विभाजित करना, यह मानवता के प्रति सबसे बड़ा अपराध है। महावीर के अनुसार सम्पूर्ण मानव-जाति को एक और प्रत्येक मानव को अपने समान बनाकर ही हम अपने द्वारा बनाये गए क्षुद्र घेरों से ऊपर उठ सकते हैं और तभी मानवता का कल्याण सम्भव होगा।

भारत में आज जो जातिगत संघर्ष चल रहे हैं उसके पीछे मूलतः जातिगत ममत्व एवं अहंकार की भावना ही कार्य कर रही है। महावीर का कहना था कि जाति या कुल का अहंकार मानवता का सबसे बड़ा शत्रु है। किसी जाति या कुल में जन्म लेने मात्र से कोई व्यक्ति महान नहीं होता है अपितु वह महान

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होता है अपने सदाचार से एवं अपने तप-त्याग से। महत्त्व जाति विशेष में जन्म लेने का नहीं सदाचार का है। भगवान महावीर ने जाति के नाम पर मानव समाज के विभाजन को और ब्राह्मण आदि किसी वर्ग विशेष की श्रेष्ठता के दावे को कभी स्वीकार नहीं किया। उनके धर्म-संघ में हरिकेशी जैसे चाण्डाल, शकडाल जैसे कुम्भकार, अर्जुन जैसे माली और सुदर्शन जैसे वणिक सभी समान स्थान पाते थे। वे कहते थे कि चाण्डाल कुल में जन्म लेने वाले इस हरिकेशी बल को देखो, जिसने अपनी साधना से महानता अर्जित की है। वे कहते थे जन्म से कोई ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र नहीं होता है। इस प्रकार महावीर ने जातिगत आधार पर मानवता के विभाजन को एवं जातीय अहंकार को निन्दनीय मानकर सामाजिक समता एवं मानवता के कल्याण का मार्ग प्रशस्त किया है।

३. वैचारिक संघर्ष

आज मानव समाज में वैचारिक संघर्ष, राजनीतिक पार्टियों के संघर्ष और धार्मिक संघर्ष भी अपनी चरम सीमा पर हैं। आज धर्म के नाम पर मनुष्य एक-दूसरे के खून का प्यासा है। महावीर की दृष्टि में इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि हम अपने ही धर्म, सम्प्रदाय या राजनैतिक मतवाद को सर्वश्रेष्ठ मानते हैं और इस प्रकार दूसरों के मत या मन्तव्यों की आलोचना करते हैं। महावीर का कहना था कि दूसरे धर्म, सम्प्रदाय या मतवाद को पूर्णतः मिथ्या कहना यही हमारी सबसे बड़ी भूल है। वे कहते हैं कि जो लोग अपने-अपने मत की प्रशंसा और दूसरे के मतों की निन्दा करते हैं वे सत्य को ही विद्रूपित करते हैं। महावीर की दृष्टि में सत्य का सूर्य सर्वत्र प्रकाशित हो सकता है अतः हमें यह अधिकार नहीं कि हम दूसरों को मिथ्या कहें। दूसरों के विचारों, मतवादों या सिद्धान्तों का समादर करना महावीर के चिन्तन की सबसे बड़ी विशेषता रही है। वे कहते थे कि दूसरों को मिथ्या कहना यही सबसे बड़ा मिथ्यात्व है। भगवान महावीर ने जिस अनेकान्तवाद की स्थापना की उसका मूल उद्देश्य विभिन्न धर्मों, सम्प्रदायों और मतवादों के बीच समन्वय और सद्भाव स्थापित करना है। उनके अनुसार हमारी आग्रहपूर्ण दृष्टि ही हमें सत्य को देख पाने में असमर्थ बना देती है। महावीर की शिक्षा आग्रह की नहीं अनाग्रह की है। जब तक दुराग्रह रूपी रंगीन चश्मों से हमारी चेतना आवृत्त रहेगी हम सत्य को नहीं देख सकेंगे। वे कहते थे कि सत्य, सत्य होता है, उसे मेरे और पराये के घेरे में बाँधना ही उचित नहीं है। सत्य जहाँ भी हो उसका आदर करना चाहिए। महावीर के इस सिद्धान्त का प्रभाव परवर्ती जैनाचार्यों पर भी पड़ा है। आचार्य हरिभद्र कहते हैं कि व्यक्ति चाहे श्वेताम्बर हो या दिगम्बर, बौद्ध हो या अन्य धर्मावलम्बी, यदि वह समभाव की साधना करेगा; राग, आसक्ति या तृष्णा के घेरे से उठेगा तो वह अवश्य ही मुक्ति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

को प्राप्त करेगा। अपने ही धर्मवाद से मुक्ति मानना यही धार्मिक सद्भाव में सबसे बड़ी बाधा है। महावीर का सबसे बड़ा अवदान है कि उन्होंने हमें आग्रह मुक्त होकर सत्य देखने की दृष्टि दी और इस प्रकार मानवता को धर्मों, मतवादों के संघर्षों से ऊपर उठना सिखाया।

४. आर्थिक संघर्ष

आज विश्व में जब कभी युद्ध और संघर्ष के बादल मँडराते हैं तो उनके पीछे कहीं न कहीं कोई आर्थिक स्वार्थ होते हैं। आज का युग अर्थप्रधान युग है। मनुष्य में निहित संग्रह-वृत्ति और भोग-भावना अपनी चरम सीमा पर है। वस्तुतः हम अपने स्वार्थों से ऊपर उठकर दूसरों की पीड़ाओं को जानना ही नहीं चाहते। अपनी संग्रह-वृत्ति के कारण हम समाज में एक कृत्रिम अभाव उत्पन्न करते हैं। जब एक ओर संग्रह के द्वारा सम्पत्ति के पर्वत खड़े होते हैं तो दूसरी ओर स्वाभाविक रूप से खाइयाँ बनती हैं। फलतः समाज धनी और निर्धन, शोषक और शोषित ऐसे दो वर्गों में बँट जाता है और कालान्तर में इनके बीच वर्ग-संघर्ष प्रारम्भ होते हैं। इस प्रकार समाज-व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो जाती है। समाज में जो भी आर्थिक विषमतायें हैं उसके पीछे महावीर की दृष्टि में परिग्रह वृत्ति ही मुख्य है। यदि समाज से आर्थिक संघर्ष समाप्त करना है तो हमें मनुष्य की संग्रह-वृत्ति और भोगवृत्ति पर अंकुश लगाना होगा। महावीर ने इसके लिए अपरिग्रह, परिग्रह-परिमाण और उपभोग-परिभोग परिमाण के व्रत प्रस्तुत किये। उन्होंने बताया कि मुनि को सर्वथा अपरिग्रही होना चाहिये। साथ ही गृहस्थ को भी अपनी सम्पत्ति का परिसीमन करना चाहिए, उसकी एक सीमा-रेखा बना लेनी चाहिए।

इसी प्रकार उन्होंने वर्तमान उपभोक्तावादी संस्कृति के विरोध में मनुष्य को यह समझाया था कि वह अपनी आवश्यकताओं और इच्छाओं को सीमित करे। महावीर कहते थे कि मनुष्य को जीवन जीने का अधिकार तो है किन्तु दूसरों को सुख-सुविधाओं से वंचित करने का अधिकार नहीं है। उन्होंने व्यक्ति को खान-पान आदि वृत्तियों पर संयम रखने का उपदेश दिया था। यह जानकर सुखद आश्चर्य होता है कि भगवान् महावीर ने आज से २५०० वर्ष पूर्व अपने गृहस्थ उपासकों को यह निर्देश दिया था कि वे अपने खान-पान की वस्तुओं की सीमा निश्चित कर लें। जैन आगमों में इस बात का विस्तृत विवरण है कि गृहस्थ को अपनी आवश्यकता की किन-किन वस्तुओं की मात्रा निर्धारित कर लेनी चाहिए। अभी विस्तार से चर्चा में जाना सम्भव नहीं है फिर भी इतना कहा जा सकता है कि भगवान महावीर ने मनुष्य की संचय-वृत्ति पर संयम रखने का उपदेश देकर मानव जाति के आर्थिक संघर्षों के निराकरण का एक मार्ग प्रशस्त किया। वस्तुतः भगवान् महावीर ने वृत्ति में अनासक्ति, विचारों में अनेकान्त,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

व्यवहार में अहिंसा, आर्थिक जीवन में अपरिग्रह और उपभोग में संयम के सिद्धान्त के रूप में मानवता के कल्याण का जो मार्ग प्रस्तुत किया था, वह आज भी उतना ही प्रासंगिक है, जितना कि आज से २५०० वर्ष पूर्व था। आज भी अहिंसा, अनेकान्त और अपरिग्रह की यह त्रिवेणी मानव-जाति के कल्मषों को धो डालने के लिए उतनी ही उपयोगी है जितनी महावीर के युग में थी।

आज मात्र वैयक्तिक स्तर पर ही नहीं सामाजिक स्तर पर भी अहिंसा, अनेकान्त और अपरिग्रह की साधना करनी होगी, तभी हम एक समतामूलक समाज की रचना कर मानव जाति को सन्त्रासों से मुक्ति दिला सकेंगे और यही महावीर के प्रति हमारी सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

निदेशक
पार्श्वनाथ विद्यापीठ, वाराणसी।

●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org